न्यायमूर्ति श्री सतपा***ल के समक्ष***

राज कुमार और अन्य- याचिकाकर्ता

बनाम

नारायण दास और अन्य - उत्तरदाता

C.R.No 1998 सन 1199

दिनांकित 29 जून, 1998

सिविल प्रक्रिया संहिता, *1908*- मध्यस्थता अधिनियम, *1940*- विवाद के विषय वस्तु के संबंध में लंबित *वाद* – दौरान वाद, न्यायालय के आदेश के बिना पक्षकारों द्वारा मध्यस्थता के लिए विवाद संदर्भित - ऐसा संदर्भ न्यायालय के आदेश के बिना *वैध* नहीं है।

यह *निर्णीत किया गया कि, यह सत्य है कि पक्षकार* न्यायालय के हस्तक्षेप के बिना किसी विवाद को मध्यस्थता के लिए संदर्भित करने के लिए स्वतंत्र होते है, परंतु यह केवल तभी किया जा सकता है जब विवाद के विषय के संबंध में कोई मुकदमा लंबित ना हो। यदपि, अगर विवाद की विषय वस्तु से संबंधित कोई वाद लंबित है, तो न्यायालय के आदेश के बिना मध्यस्थता के लिए वाद के लंबित रहने के दौरान कोई वैध संदर्भ नहीं हो सकता है।

(पैरा 10)

श्री एस. पी. गुप्ता, वरिष्ठ अधिवक्ता, के. जी. सहजपाल अधिवक्ता के साथ, याचिकाकर्ता के वकील

अधिवक्ता सी. बी. गोयल के साथ आर. सी. चौहान अधिवक्ता, प्रतिवादी के अधिवक्ता ।

निर्णय

सत पाल**,** न्यायमूर्ति**.**

(1) यह याचिका सिविल जज (जे. डी.), पानीपत द्वारा पारित 29 नवंबर, 1998 के आदेश के विरुद्ध दाखिल कि गई है। इस आदेश द्वारा, विद्वान सिविल न्यायाधीश ने सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 47 के तहत याचिकाकर्ताओं/निर्णीत ऋणी द्वारा दायर आपत्तियों को खारिज कर दिया है। इस मामले में प्रत्यर्थियों-डिक्री धारकों ने कुछ भूमि के कब्जे के लिए मुकदमा दायर किया था । विद्वान विचारण न्यायालय के द्वारा मुकदमे का फैसला डिक्री किया गया था। विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और डिक्री से व्यथित होकर याचिकाकर्ताओं/ निर्णीत ऋणी ने सिविल अपील संख्या 123 सन 1992 विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, पानीपत के न्यायालय में दायर की थी। अपील के लंबित रहने के दौरान, याचिकाकर्ताओं/ निर्णीत ऋणी ने इस आधार पर अपील को वापस लेने के लिए एक आवेदन इस आशय का दायर किया कि अपील के पक्षकरो ने अपने विवाद को मध्यस्थता हेतु भेज दिया था तथा उन्होंने कार्यवाही आरंभ कर दी है । प्रतिवादीगण के विद्वान वकील ने यह बयान दिया कि अपील को वापस लिए जाने के अनुरूप अगर अपील को स्वीकृत कर उसे खारिज कर दिया जाये तो उन्हें कोई आपत्ति नहीं है। पक्षकारों के बयान दर्ज करने के बाद, अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, पानीपत ने अपने आदेश दिनांकित 18 दिसंबर, 1992 (प्रतिलिपि अनुलग्नक पी-3) के द्वारा अपील को वापिस लेने के कारण कारिज कर दिया।

(2) प्रत्यर्थियों/ डिक्री धारकों के अनुसार, निर्णीत ऋणी के असहयोग के कारण, मध्यस्थता कार्यवाही पूरी नहीं हो सकी। तदनुसार, उन्होंने 1987 में पारित डिक्री को निष्पादित करने के लिए निष्पादन याचिका दायर की। निष्पादन कार्यवाहियों की शुरुआत के बाद, याचिकाकर्ताओं- निर्णीत ऋणी ने आपत्तियां दायर कीं जिन्हें 29 जनवरी, 1998 के विवादित आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया है, जैसा कि ऊपर कहा गया है:

(3) याचिकाकर्ताओं की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री एस. पी. गुप्ता ने यह कथन किया कि विद्वान निचली अपीलीय न्यायालय के समक्ष कार्यवाही मुकदमे की निरंतरता में थी और चूंकि विद्वान निचली अपीलीय अदालत के समक्ष अपील के लंबित होने के दौरान, पक्षों के बीच विवाद, पक्षों की सहमति से, मध्यस्थता के लिए भेजा गया था, इसलिए प्रतिवादीगण निष्पादन कार्यवाही शुरू नहीं कर सकते थे। उन्होंने यह भी कथन किया कि याचिकाकर्ता विद्वान मध्यस्थों के समक्ष कार्यवाही में सहयोग करने के लिए तत्पर और इच्छुक थे और मध्यस्थों को एक निर्धारित अवधि के भीतर पंचाट पारित करने का निर्देश दिया जा सकता है। अपने कथन के समर्थन में, विद्वान अधिवक्ता ने निम्नलिखित न्यायिक निर्णयों का समर्थन लिया —

(i) फाइनेंसर एंड फाइबर डीलर्स लिमिटेड बनाम शंकर ला*ल* सरदार[1]

(ii) शाह जगजीवन जेठा बनाम दोशी तलाक चंद हीराचंद[2]

(iii) मोरध्वज बनाम भूदर दास[3]

---

1 ए. आई. आर. 1961 कलकत्ता 46

2 ए. आई. आर. 1955 सौराष्ट्र 88

3 ए. आई. आर. 1955 इलाहाबाद 351 (एफ. बी.)

(4) विद्वान अधिवक्ता ने यह भी कथन किया कि पक्षकारों को किसी विवाद को न्यायालय के हस्तक्षेप के बिना मध्यस्थता के लिए संदर्भित करने की स्वतंत्रता होती है। इसलिए, उन्होंने यह भी तर्क दिया कि भले ही विवाद को विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, पानीपत द्वारा मध्यस्थता के लिए नहीं भेजा गया है और इसे अदालत से बाहर मध्यस्थता के लिए भेजा गया है, फिर भी यह पक्षों पर बाध्यकारी था। इस निवेदन के समर्थन में विद्वान अधिवक्ता ने नारायण दास बनाम वल्लभ दास[4] के निर्णय में सर्वोच्च न्यायालय *का फैसला दाखिल* किया।

(5) जबकि प्रतिवादीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री सी. बी. गोयल ने यह कथन किया कि वर्तमान मामले में प्रतिवादीगण के मुकदमे का फैसला पहले ही किया जा चुका है और अपील के लंबित रहने के दौरान, विवाद को अदालत से बाहर मध्यस्थता के लिए भेजा गया था। उन्होंने कहा कि चूंकि विवाद को अदालत द्वारा संदर्भित नहीं किया गया था, इसलिए संदर्भ स्वयं कानून के विपरीत था। अपने कथनों के समर्थन में विद्वान अधिवक्ता ने सीटी. ए. सीटी. नचियप्पा चेट्टियार और अन्य बनाम सीटी. ए. सीटी. सुब्रमण्यम केट्टियार[5] में उच्चतम न्यायालय के फैसले पर भरोसा रखा।

(6) विद्वान वकील ने यह भी कथन किया कि अपील के लंबित रहने के दौरान, याचिकाकर्ताओं ने खुद अपील को वापस लेने के लिए एक आवेदन दायर किया था और तदनुसार याचिकाकर्ताओं के कहने पर, अपील को वापस दे कर निष्पादित कर दिया गया था। इसलिए उन्होंने तर्क दिया कि विद्वान निष्पादन न्यायालय द्वारा पारित आदेश में कोई कमजोरी नहीं थी।

(7) मैंने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा की गई दलीलों पर विचारपूर्वक विचार किया है और अभिलेख का अवलोकन किया है। यह पक्षकारों के मध्य स्वीकृत है की प्रतिवादीगण के मुकदमे को विद्वान निचली अदालत द्वारा का वर्ष 1987 मे डिक्री कर दिया गया था। निचली अदालत के फैसले को याचिकाकर्ताओं- निर्णीत ऋणी द्वारा विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, पानीपत के समक्ष चुनौती दी गई थी और अपील के लंबित रहने के दौरान याचिकाकर्ताओं और प्रतिवादीगण ने पारस्परिक रूप से विवाद को मध्यस्थता के लिए भेजा था। मामले को मध्यस्थता के लिए भेजने के बाद, याचिकाकर्ताओं द्वारा अपील को वापस लेने के लिए निचली अपीलीय अदालत के समक्ष एक आवेदन दायर किया गया था और प्रतिवादीगण द्वारा कोई आपत्ति नहीं दिए जाने के बाद, अपील को वापस ले लिया गया था। यह सत्य है कि न्यायालय के हस्तक्षेप के बिना विवाद को मध्यस्थता के लिए संदर्भित करने के लिए पक्षकार स्वतंत्र होते है, लेकिन यह संदर्भ केवल तभी किया जा सकता है जब विवाद के विषय के संबंध में कोई मुकदमा लंबित न हो। तथापि, यदि विवाद की विषय वस्तु के संबंध में कोई वाद लंबित है, तो न्यायालय के आदेश के बिना, मध्यस्थता के लिए वाद के लंबित रहने के दौरान कोई वैध संदर्भ नहीं किया जा सकता है। यह विवादित नहीं है कि अपील मुकदमे की कार्यवाही की निरंतरता है। चूंकि वर्तमान मामले में विवाद को मध्यस्थता के लिए भेजे जाने के समय कार्यवाही विद्वान अपीलीय न्यायालय के समक्ष लंबित थी, अत: यह विवाद का कोई वैध संदर्भ नहीं था क्योंकि यह संदर्भ न्यायालय के आदेश के बिना किया गया था। यहाँ नारायण दास (उपरोक्त) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय की निम्नलिखित टिप्पणियों का संदर्भ दिया जा सकता है।

> "न्यायालय के हस्तक्षेप के बिना किसी विवाद को मध्यस्थता के लिए संदर्भित करना पक्षकारों के लिए हमेशा खुला रहता है। यदि विवाद की विषय वस्तु के संबंध में मुकदमा लंबित है, तो मुकदमे के लंबित रहने के दौरान, अदालत के आदेश के बिना मध्यस्थता के लिए कोई वैध संदर्भ नहीं हो सकता है।इसका अंतर्निहित कारण एक ही विवाद के साथ-साथ काम करने वाले न्यायालय और मध्यस्थ दोनों द्वारा क्षेत्राधिकार के टकराव से बचना है।"

(11) वर्तमान मामले में चूंकि अपील अभी भी लंबित थी और विवाद को न्यायालय के आदेश के बिना मध्यस्थता के लिए भेजा गया था, इसलिए मेरा यह मत है कि संदर्भ स्वयं वैध नहीं था। इसके अलावा चूंकि विद्वान अपीलीय न्यायालय ने याचिकाकर्ताओं की अपील को केवल वापस लिए जाने के रूप में खारिज कर दिया, लेकिन 1987 में विद्वान निचली अदालत द्वारा पारित निर्णय और डिक्री में कोई बदलाव नहीं किया है, इसलिए इस याचिका में कोई सार नहीं मिलता है। तदनुसार, याचिका खारिज की जाती है। हालाँकि, पक्षकारों को अपना खर्च खुद वहन करने के लिए छोड़ दिया जाता है।

जे एस टी

अस्वीकरण : *स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।*

परीक्षित
प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी
(Trainee Judicial Officer)
महम, रोहतक,हरियाणा

4 1971 (5) एस. सी. सी 643
5 ए. आई. आर. 1960 एस. सी. 30